[2023] 2 एस.सी.आर. 1037

आर सुंदरम

बनाम.

तमिलनाडु राज्य स्तरीय जांच समिति और अन्य

(सिविल अपील सं. 1770-1771/2023)

17 मार्च, 2023

[न्या. अनिरुद्ध बोस और न्या. कृष्णा मुरारी]

सेवा कानून - अनुसूचित जनजाति - समुदाय प्रमाणपत्र - वैधता - सेवानिवृत्ति के बाद लाभ - प्रभाव - अपीलार्थी को समुदाय प्रमाणपत्र के आधार पर प्रत्यर्थी-बैंक में क्लर्क सह-सराफ के रूप में नियुक्त किया गया था– अपीलार्थी ने 38 वर्षों तक सेवा की और सेवानिवृत्त होने वाला था, लेकिन उसकी सेवानिवृत्ति के 2 दिन पहले, उसे इस आधार पर सेवा समाप्ति आदेश मिला कि उसका जाति प्रमाणपत्र गलत है और पीएफ को छोड़कर उसके सभी सेवानिवृत्ति लाभ देने से इनकार कर दिया गया था- इससे व्यथित होकर अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया - उच्च न्यायालय ने मामला वापस जांच समिति को भेज दिया - सतर्कता और विशेषज्ञों की रिपोर्ट के आधार पर जांच समिति ने माना कि अपीलार्थी का जाति प्रमाणपत्र सही नहीं है -इससे व्यथित होकर, अपीलार्थी ने फिर से उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, लेकिन रिट याचिका और अवमानना याचिका इस आधार पर खारिज कर दी गई कि अपीलार्थी को उचित अवसर दिए जाने के बावजूद, उसने इसका पालन

नहीं किया-अपील में, अभिनिर्धारित किया गया : अपीलार्थी ने उक्त पद के लिए आवेदन करने से पहले अनुसूचित जनजाति उम्मीदवार के रूप में अपने दावे का समर्थन करने वाले सभी दस्तावेज उपलब्ध कराए थे– हालांकि, दस्तावेज़ों की प्रामाणिकता का पुनर्मूल्यांकन 19 वर्षों तक लंबित रखा गया था– वर्तमान मामले में उत्पीड़न का स्पष्ट रुप नज़र आ रहा है क्योंकि समाप्ति आदेश अपीलार्थी को 38 वर्ष की सेवा पूरी करने के बाद उसकी सेवानिवृत्ति से ठीक दो दिन पहले प्राप्त हुआ था और समाप्ति आदेश पारित होने की तिथि पर, अपीलार्थी के खिलाफ कोई मामला लंबित नहीं था -जैसा कि डाक विभाग द्वारा भी माना गया था अपीलार्थी को पारित नोटिस किसी और को भेजे जाने के कारण नए सिरे से हो रही जांच में स्पष्टतः अपीलार्थी को सुनवाई का मौका नहीं मिला था-- इसके अलावा, प्रत्यर्थी गण का यह दावा कि अपीलार्थी का समुदाय प्रमाणपत्र नकली था, साबित नहीं हुआ -- अपीलार्थी के समुदाय प्रमाणपत्र को फर्जी घोषित करने वाली दो रिपोर्टें अत्यधिक देरी के बाद प्रस्तुत की गईं और दोनों रिपोर्टों में अपीलार्थी की भागीदारी की अनुमति नहीं दी गई है– इस प्रकार, विवादित आदेश अपास्त कर दिया गया - अपीलार्थी सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों का हकदार है।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए

अभिनिर्धारित किया: 1. 38 वर्षों तक प्रत्यर्थी-बैंक की सेवा करने के बाद, अपीलार्थी को अपनी सेवानिवृत्ति से दो दिन पहले बिना किसी उचित जांच के अपना सेवा समाप्ति आदेश प्राप्त हुआ। इसके अलावा, प्रत्यर्थी सं. 1 को किए गए पत्रव्यवहार में, यह पाया गया कि समाप्ति आदेश

पारित करने की तारीख पर, अपीलार्थी के खिलाफ कोई मामला लंबित नहीं था। इसमें उत्पीड़न का बहुत स्पष्ट रूप दिखाई दे रहा है, और ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी और उसके पेंशन लाभ के अधिकार के विरुद्ध एक भयावह मकसद है। 38 साल की सेवा के बाद भी, मामले के गुणागुण के बावजूद, तथ्य यह है कि अपीलार्थी के साथ सम्मान से बर्ताव नहीं किया गया है, यह देखना दुखद है, और लटकती तलवार के रूप में विलंबित प्रक्रिया का उपयोग केवल उत्पीड़न के रूप में किया जा सकता है। [पैरा 14] [1044-सी-ई]

2. इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से कहा गया है कि समुदाय प्रमाणपत्र के सत्यापन का कार्य शीघ्रता से पूरा किया जाना चाहिए। तथापि, वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर बताया गया है, इसमें 19 साल की अत्यधिक और अस्पष्ट देरी हुई है, इतना समय जिसे "उचित समय" के दायरे में नहीं माना जा सकता है। इसके अलावा, प्रत्यर्थी समिति ने अंततः अपीलार्थी की सेवानिवृत्ति के वर्षों के बाद अपनी पहली रिपोर्ट प्रस्तुत की, हालांकि इसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होने के आधार पर उच्च न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया था, क्योंकि अपीलार्थी को अपने साक्ष्य प्रस्तुत करने और गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर नहीं दिया गया। इसके बाद, एक नई जांच की गई, और एक और रिपोर्ट फिर से प्रस्तुत की गई, हालांकि यह रिपोर्ट भी पिछली रिपोर्ट की तरह ही भ्रांति से ग्रस्त है क्योंकि यहां भी अपीलार्थी को सुने जाने का अवसर नहीं दिया गया है। [पैरा 16 और 17][1046-बी-डी]

3. उच्च न्यायालय ने विवादित निर्णय में अपने निष्कर्षों में कहा कि बाद की रिपोर्ट को एकपक्षीय रूप से पारित कर दिया गया क्योंकि अपीलार्थी, कार्यवाही का नोटिस प्राप्त होने के बाद भी कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुआ। हालांकि, अपीलार्थी का दावा है कि उसे कभी नोटिस नहीं मिला। मौजूद सामग्री के मात्र अवलोकन से यह पता चल जाएगा कि जो नोटिस अपीलार्थी को दिया जाना था, वह वास्तव में श्री सुदर्शन को दिया गया था, और यह डाक विभाग द्वारा स्वीकार किया गया है और इसे डाक शीट में देखा जा सकता है। यह तथ्य अपीलार्थी द्वारा पुनर्विलोकन कार्यवाही के दौरान सामने लाया गया, हालांकि, उच्च न्यायालय इस तरह के निष्कर्ष पर विचार करने में विफल रहा और उसमें उठाए गए आधारों पर ध्यान दिए बिना पुनर्विलोकन को खारिज कर दिया और इस प्रकार निर्णय में स्पष्ट त्रुटि हुई। अपीलार्थी को सुने जाने का अवसर न देकर, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत "ऑडी अल्टरम पार्टेम (दूसरे पक्ष को सुनें)" के सिद्धांत का भी उल्लंघन हुआ है। अपीलार्थी को, ऐसी कार्यवाहियों में जहां उसके किसी समुदाय से संबंधित होने की वास्तविकता पर सवाल उठाया जा रहा हो, सुने जाने का अधिकार होना चाहिए, और गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार दिया जाना चाहिए, क्योंकि कार्यवाही की प्रकृति केवल उसके रोजगार से संबंधित प्रश्न नहीं है, बल्कि कुछ ऐसा भी है जो उसके अस्तित्व के मूल, यानी उसकी पहचान पर आघात करता है।[पैरा 18, 19 और 20][1046-डी-एच]

4. अनुसूचित जनजाति समुदायों के मामलों में एक समुदाय प्रमाणपत्र, कागज के किसी अन्य टुकड़े के विपरीत, यह एक ऐसे समुदाय से संबंधित व्यक्ति की

पहचान है जिसने वर्षों तक उत्पीड़न का सामना किया है। भारत का संविधान ऐतिहासिक अन्याय के आधार पर अनुसूचित जनजाति समुदायों के लोगों को कुछ अधिकार प्रदान करता है, और ऐसे अधिकारों को कागजों से असल जिंदगी के धरातल पर लाने के लिए, ज्यादातर मामलों में समुदाय प्रमाणपत्र एक आवश्यक दस्तावेज बन जाता है। यह प्रमाणपत्र, इतिहास की अभिस्वीकृति होने के साथ-साथ, एक दस्तावेज भी है जो संवैधानिक अधिकारों को वास्तविकता में गढ़ने वाला एक उपकरण बनकर ऐसे ऐतिहासिक अन्याय को सुधारने का प्रयास करता है। ऐसे परिदृश्य में जहां दस्तावेज के महत्व और लोगों के अधिकारों पर इसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए समुदाय प्रमाणपत्र की वैधता पर सवाल उठाया जाता है, दस्तावेज पर सवाल उठाने वाली कार्यवाही, सबसे असाधारण परिस्थितियों को छोड़कर, एकपक्षीय नहीं की जा सकती है। कोई भी व्यक्ति, जिसकी संपूर्ण पहचान और उसके अतीत, वर्तमान और भविष्य के अधिकारों को चुनौती दी गई है, उसे कम से कम निष्पक्ष रूप से सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए। हालांकि, मौजूदा मामले में, अपीलार्थी को इस तरह के अधिकार से वंचित कर दिया गया है, और इसलिए प्रमाणपत्र की प्रकृति को गलत साबित करने के लिए प्रत्यर्थी (गण) पर सबूत का जो भार था उसका निर्वहन नहीं किया गया है। सबूत के ऐसे भार के निर्वहन के अभाव में, इस न्यायालय को अपीलार्थी के समुदाय प्रमाणपत्र को वास्तविक मानना चाहिए। [पैरा 22 और 23][1047-सी-जी]

झारखंड राज्य एवं अन्य बनाम जीतेन्द्र कुमार श्रीवास्तव एवं अन्य (2013) 12 एससीसी 210 : [2013] 8 एससीआर

177; डॉ. उमा अग्रवाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य। (1999) 3 एससीसी 438 : [1999] 2 एससीआर 42; माधुरी पाटिल और अन्य बनाम अतिरिक्त आयुक्त, आदिवासी विकास और अन्य (1994) 6 एससीसी 241 : [1994] 3 अनुपूरक। एससीआर 50 -पर निर्भर।

<u>निर्णयजन्य विधि संदर्भ</u>

[2013] 8 एससीआर 177 में अनुछेद 11 पर निर्भर

[1999] 2 एससीआर 42 में अनुछेद 12 पर निर्भर

[1994] 3 अनुपूरक, एससीआर 50 में अनुछेद 15 पर निर्भर

सिविल अपीलीय अधिकारिता: सिविल अपील सं. 1770-1771/2023.

पुनर्विलोकन आवेदन संख्या 157/2019 में मद्रास में उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 13.02.2020 से और रिट याचिका संख्या 28295/2018 में दिनांकित 16.04.2019 से।

आर. बालासुब्रमण्यम, वरिष्ठ अधिवक्ता, डॉ. राम शंकर, विश्वनाथन अय्यर, ए. वसंथा कुमार, जी. जय सिंह, सुश्री सुजाथड बागधी, सुश्री आर. वी. शरुमति, मेसर्स राम शंकर एंड कंपनी, अपीलार्थी के अधिवक्ता।

संजय आर. हेगड़े, वरिष्ठ अधिवक्ता, डी. कुमानन, शेख एफ. कालिया, डॉ. जोसेफ एरिस्टोटल एस., सुश्री नूपुर शर्मा, शोभित द्विवेदी, सुश्री वैदेही रस्तोगी, शिव राम

शर्मा, विश्वादित्य शर्मा, सुश्री वसुंधरा शर्मा , प्रत्यर्थी (गण) के अधिवक्ता।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा सुनाया गया

न्या., कृष्णा मुरारी

विलंब के लिए माफ कर दिया गया। अनुमति दी गई।

2. वर्तमान अपील मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित पुनर्विलोकन आवेदन संख्या 157/2019 में दिनांक 13.02.2020 के अंतिम आदेश और निर्णय के खिलाफ और मद्रास उच्च न्यायालय (इसके बाद इसे "उच्च न्यायालय" कहा जाएगा) द्वारा पारित रिट याचिका संख्या 28295/2018 में दिनांक 16.04.2019 के आदेश के खिलाफ निर्देशित है जिससे अपीलार्थी (गण) की सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों से इनकार करने को जो चुनौती थी वो खारिज कर दी गई।

<u>पृष्ठभूमि संबंधी तथ्य</u>

3. अपीलार्थी को 15.11.1975 के समुदाय प्रमाणपत्र के आधार पर प्रत्यर्थी-बैंक में क्लर्क-सह-सराफ़ के रूप में नियुक्त किया गया था, जिसमें प्रमाणित किया गया था कि

वह कोंडा रेड्डी समुदाय से है। 38 साल के कार्यकाल के बाद, अपीलार्थी स्केल 3 अधिकारी के रूप में सेवानिवृत्त हो गया, हालांकि, उनकी सेवानिवृत्ति से दो दिन पहले, उनका जाति प्रमाणपत्र गलत होने के आधार पर उन्हें सेवा समाप्ति का आदेश मिला और पीए.फ. को छोड़कर उनके सभी सेवानिवृत्ति लाभ देने से इनकार कर दिया गया।

4. प्रत्यर्थी बैंक में अपीलार्थी के कार्यकाल के दौरान, जिला कलेक्टर (यहां छठे प्रत्यर्थी) ने, बिना कोई जांच किए, अपीलार्थी को दिया गया समुदाय प्रमाणपत्र रद्द कर दिया। इससे व्यथित होकर, अपीलार्थी ने रिट याचिका सं. 12546/1998 दायर की। उच्च न्यायालय ने दिनांक 09.08.2009 के आदेश के माध्यम से मामले को नए सिरे से जांच करने के लिए तमिलनाडु राज्य स्तरीय जांच समिति (यहां प्रथम प्रत्यर्थी) को वापस भेज दिया। हालांकि, उच्च न्यायालय के आदेश के बाद भी, अपीलार्थी की सांप्रदायिक स्थिति के संबंध में सत्यापन अभी भी पूरा नहीं हुआ था, और इसके कारण अपीलार्थी को उसके सेवानिवृत्ति लाभों की प्राप्ति के बिना सेवानिवृत्ति मिल गई।

5. इसके बाद अपीलार्थी ने अपने सेवानिवृत्ति पूर्व लाभ पाने के लिए उच्च न्यायालय में रिट याचिका सं. 19006/2013 दायर की, हालांकि, दिनांक 04.07.2014 के आदेश के माध्यम से इसका निपटारा कर दिया गया था, और पहले प्रत्यर्थी को आठ सप्ताह की अवधि के भीतर जांच पूरी करने का निर्देश दिया गया था। इसके बाद अपीलार्थी ने उपरोक्त उल्लिखित उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय में एक विशेष अनुमति याचिका दायर की, और विशेष अनुमति याचिका के लंबित रहने के दौरान, इस माननीय न्यायालय द्वारा एक अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसमें अपीलार्थी को पूछताछ के लिए पहले प्रत्यर्थी के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था। इसके बाद उक्त विशेष अनुमति याचिका को वापस ले लिया गया।

6. इस बीच, पांचवें प्रत्यर्थी ने जांच पूरी की और 29.11.2017 की एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें पाया गया कि अपीलार्थी वास्तव में कोंडा रेड्डी समुदाय से नहीं था। इस रिपोर्ट के आधार पर, अपीलार्थी को दिनांक 07.12.2017 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया।

इसके विपरीत, अपीलार्थी ने कारण बताओ नोटिस और जांच रिपोर्ट को रद्द करने की मांग करते हुए एक और रिट याचिका सं. 33207/2017 दायर की। उच्च न्यायालय ने दिनांक 19.12.2017 के आदेश के माध्यम से इसकी अनुमति दी और कारण बताओ नोटिस और जांच रिपोर्ट को रद्द करते हुए मामले को वापस जांच समिति को भेज दिया।

7. उच्च न्यायालय द्वारा मामले को वापस जांच समिति को भेजने के आदेश के बाद, समिति ने फिर से कार्यवाही की और माना कि सतर्कता रिपोर्ट और अन्य विशेषज्ञ रिपोर्टों के आधार पर अपीलार्थी का जाति प्रमाणपत्र सही नहीं था।

8. अपीलार्थी ने, जांच समिति की उपर्युक्त रिपोर्ट से व्यथित होकर, एक और रिट याचिका सं. 28295/2018 दायर की और साथ ही समुदाय प्रमाणपत्र की बहाली की मांग करते हुए एक अवमानना याचिका भी दायर की हालांकि दोनों को उच्च न्यायालय ने दिनांक 16.04.2019 के विवादित निर्णय के माध्यम से इस आधार पर खारिज कर दिया था कि अपीलार्थी को उचित

अवसर दिए जाने के बावजूद, उसने इसका पालन नहीं किया था; अपीलार्थी ने तब उच्च न्यायालय में एक पुनर्विलोकन आवेदन सं. 157/2019 प्रस्तुत किया, हालांकि, इसे भी दिनांक 13.02.2020 के दूसरे विवादित निर्णय के माध्यम से खारिज कर दिया गया था।

<u>विश्लेषण</u>

9. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित वरिष्ठ अधिवक्ता श्री आर. बालासुब्रमण्यम और श्री एस. प्रभाकरन ने जोरदार तर्क दिया कि दिनांक 19.12.2017 के आदेश में उच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुसार, अपीलार्थी को गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का उचित अवसर दिया जाना था, और प्रत्यर्थी (गण) द्वारा निर्भर सभी दस्तावेजों की प्रतियां अपीलार्थी को दी जानी थीं, हालांकि, वैसा नहीं किया गया। आगे यह भी तर्क दिया गया है कि जिस समय अपीलार्थी को समाप्ति आदेश दिया गया था, उसके खिलाफ कोई जांच लंबित नहीं थी, और पूरी प्रक्रिया में उसे लगभग 19 वर्षों तक उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा।

10. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी (गण) की ओर से पेश हुए वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल शंकरनारायणन, और

एओआर श्री जोसेफ एरिस्टोटल ने यह तर्क दिया कि अपीलार्थी को विधिवत नोटिस दिया गया था, और यह अपीलार्थी ही था जो कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुआ। यह भी तर्क दिया गया कि अपीलार्थी के उपस्थित नहीं होने के कारण कार्यवाही स्थगित कर दी गई, लेकिन स्थगन के बाद भी अपीलार्थी उपस्थित नहीं हुआ, और इसलिए समिति के पास अपना निर्णय एकपक्षीय रूप से पारित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

11. दोनों पक्षों की प्रस्तुति को ध्यान में रखते हुए, सबसे पहले हम यही कहना चाहेंगे कि पेंशन के लाभ का अधिकार एक संवैधानिक अधिकार है और इसे उचित औचित्य के बिना छीना नहीं जा सकता है जैसा कि ***झारखंड राज्य और अन्य बनाम जितेंद्र कुमार श्रीवास्तव और अन्य 1*** के मामले में माना गया है। इस निर्णय का प्रासंगिक पैराग्राफ यहां उद्धृत किया जा रहा है:

> *"15. पश्चिम बंगाल राज्य बनाम हरेश सी. बनर्जी [(2006) 7 एससीसी 651: 2006 एससीसी (एल एंड एस) 1719 में इस न्यायालय ने माना कि तब भी, जब 20-6-1979 से प्रभावी संविधान (चवालीसवाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 के माध्यम से संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) और*

अनुच्छेद 31(1) को निरस्त करने के बाद, संपत्ति का अधिकार अब मौलिक अधिकार नहीं रहा, यह अभी भी एक संवैधानिक अधिकार था, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 300-क में प्रावधान किया गया है। पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को संपत्ति के अधिकार के समान माना गया। अन्यथा, उस मामले में चुनौती पश्चिम बंगाल सेवा (मृत्यु-सह सेवानिवृत्ति लाभ) नियम, 1971 के नियम 10(1) की वैधता को थी जिसने राज्यपाल को कुछ परिस्थितियों में पेंशन या उसके किसी हिस्से को रोकने या वापस लेने का अधिकार दिया और उक्त चुनौती को इस न्यायालय ने निरस्त कर दिया।

16. तथ्य यह है कि कानूनी सिद्धांत में एक प्रावधान है कि पेंशन प्राप्त करने का अधिकार "संपत्ति" में एक अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है। एक बार जब हम उस आधार पर आगे बढ़ते हैं, तो इस निर्णय की शुरुआत में हमारे द्वारा पूछे गए प्रश्न का उत्तर बहुत स्पष्ट हो जाता है। कानून के अधिकार के बिना किसी व्यक्ति को इस पेंशन से वंचित नहीं किया जा सकता है, जो कि संविधान के अनुच्छेद 300-क में निहित संवैधानिक आदेश है। यह इस प्रकार है कि बिना किसी वैधानिक प्रावधान के और प्रशासनिक निर्देश के बहाने अपीलार्थी द्वारा पेंशन या उपदान का एक हिस्सा छीनने या यहां तक कि छुट्टियों के नकदीकरण का प्रयास स्वीकार नहीं किया जा सकता है।"

12. इसके अलावा, ***डॉ. उमा अग्रवाल बनाम उत्तर प्रदेश सरकार*** के मामले में, इस न्यायालय ने माना कि

पेंशन संबंधी लाभ देना कोई इनाम नहीं है, बल्कि कर्मचारी का अधिकार है, और इस तरह उचित औचित्य के बिना इससे इनकार नहीं किया जा सकता है।

13. शुरुआत में ही, हम यह बताना चाहेंगे कि यह न्यायालय यहां प्रत्यर्थी (गण) द्वारा अपीलार्थी के साथ किए गए व्यवहार से स्तब्ध है। अपीलार्थी ने अनुसूचित जनजाति उम्मीदवारों के लिए आरक्षित पद पर आवेदन करने से पहले अनुसूचित जनजाति उम्मीदवार के रूप में अपने दावे के समर्थन में सभी आवश्यक दस्तावेज उपलब्ध कराए और दस्तावेजों को सत्यापित और अनुमोदित कराया। हालांकि, नौकरी दिए जाने के बाद, अपीलार्थी के दस्तावेजों की प्रामाणिकता का पुनर्मूल्यांकन 19 वर्षों से लंबित रखा गया है, जो अपीलार्थी के सिर पर तलवार की तरह लटक रहा है।

14. प्रत्यर्थी बैंक में 38 वर्षों तक सेवारत रहने के बाद, अपीलार्थी को, अपनी सेवानिवृत्ति से दो दिन पहले, बिना किसी उचित जांच के अपना समाप्ति आदेश प्राप्त हुआ। इसके अलावा, प्रत्यर्थी सं 1 को किए गए पत्रव्यवहार में, यह पाया गया कि समाप्ति आदेश पारित करने की

तारीख पर, अपीलार्थी के खिलाफ कोई मामला लंबित नहीं था। हमें, उत्पीड़न का एक बहुत स्पष्ट पैटर्न दिखाई दे रहा है, और अपीलार्थी और उसके पेंशन लाभ के अधिकार के खिलाफ एक भयावह उद्देश्य प्रतीत होता है। 38 साल की सेवा के बाद भी, मामले के गुणागुण के बावजूद, यह तथ्य कि अपीलार्थी के साथ कोई सम्मान भरा व्यवहार नहीं किया गया, यह देखकर दुख होता है और लटकती तलवार के रूप में विलंबित प्रक्रिया का उपयोग केवल उत्पीड़न के रूप में देखा जा सकता है।

15. *माधुरी पाटिल और अन्य बनाम अतिरिक्त आयुक्त, आदिवासी विकास और अन्य3 के मामले में, इस न्यायालय ने पंद्रह दिशानिर्देश दिए कि समुदाय प्रमाणपत्र के सत्यापन की प्रक्रिया कैसे पूरी की जानी चाहिए।* उक्त निर्णय से प्रासंगिक उद्धरण यहां पुनः प्रस्तुत किया गया है:

> *"गलत तरीके से प्राप्त प्रवेश या गलत सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र के आधार पर गलत तरीके से प्राप्त की गई नियुक्ति आवश्यक रूप से वास्तविक अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग के उम्मीदवारों को संविधान द्वारा प्रदत्त लाभों से वंचित करने का प्रभाव डालती है।*

सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र के अभाव में वास्तविक उम्मीदवारों को शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश या राज्य के तहत कार्यालय या पदों पर नियुक्तियों से भी वंचित कर दिया जाता है। जिन अयोग्य या नकली व्यक्तियों ने गलत तरीके से प्रवेश प्राप्त किया, वे टाल-मटोल की रणनीति अपनाते हैं और जांच समिति द्वारा जांच पूरी करने में बाधाएं पैदा करते हैं। यह सच है कि शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के लिए आवेदन आम तौर पर माता-पिता द्वारा किया जाता है, क्योंकि उस तिथि पर कई बार छात्र नाबालिग हो सकता है। यह माता-पिता या अभिभावक ही हैं जो झूठें स्थिति प्रमाणपत्र का दावा करके धोखाधड़ी कर सकते हैं। इसलिए, यह आवश्यक है कि जारी किए गए प्रमाणपत्रों की जांच जल्द से जल्द और अत्यधिक शीघ्रता और तत्परता से की जाए।

उस उद्देश्य के लिए, सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र जारी करने, उनकी जांच और उनके अनुमोदन की प्रक्रिया को सुधारना आवश्यक है, जो निम्नलिखित हो सकती है: (जोर दिया गया)

9... <u>जांच यथासंभव शीघ्रता से, अधिमानतः दिन-प्रतिदिन की कार्यवाही द्वारा दो महीने से अधिक की अवधि के भीतर पूरी की जानी चाहिए। यदि जांच के बाद, जाति जांच समिति को दावा गलत या नकली लगता है, तो उन्हें जारी प्रमाणपत्र को रद्द करने और उसे जब्त करने का आदेश पारित करना चाहिए। कार्यवाही के समापन की तारीख से एक महीने के भीतर माता-पिता/अभिभावक और</u>

<u>आवेदक को जांच के परिणाम के बारे में बताया जाना चाहिए।</u>

10. यदि कार्यवाही को अंतिम रूप देने में कोई देरी हो रही हो और इस बीच किसी शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश या किसी अधिकारी पद पर नियुक्ति की अंतिम तिथि समाप्त हो रही हो, उम्मीदवार को प्राचार्य या ऐसे अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा प्रवेश दिया जाएगा या पहले से जारी किए गए सामाजिक स्थिति प्रमाणपत्र या माता-पिता/अभिभावक/उम्मीदवार द्वारा सक्षम अधिकारी या गैर-आधिकारिक के समक्ष शपथ पत्र के आधार पर नियुक्त किया जाएगा और ऐसा प्रवेश या नियुक्ति केवल अनंतिम होनी चाहिए, जो जांच समिति द्वारा जांच के परिणाम के अधीन होगी।

15.... <u>जैसे ही जांच समिति द्वारा यह निष्कर्ष दर्ज किया जाता है कि प्राप्त प्रमाणपत्र गलत था, इसके निरस्तीकरण एवं जब्ती पर एक साथ प्रवेश अथवा नियुक्ति निरस्त करने के अनुरोध के साथ संबंधित शैक्षणिक संस्थान अथवा नियुक्ति प्राधिकारी को पंजीकृत डाक द्वारा पावती सहित सूचित किया जाना चाहिए। प्रवेश देने के लिए जिम्मेदार शैक्षणिक संस्थान के प्राचार्य आदि या नियुक्ति प्राधिकारी को उम्मीदवार को बिना कोई सूचना दिए प्रवेश/नियुक्ति रद्द कर देनी चाहिए और उम्मीदवार को आगे की पढाई से वंचित कर देना चाहिए या कार्यालय के किसी पद पर नहीं बने रहने देना चाहिए।</u>"

16. इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से कहा गया है कि समुदाय प्रमाणपत्र के सत्यापन का कार्य शीघ्रता से पूरा किया जाना चाहिए। हालांकि, वर्तमान मामले में, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, 19 साल की अत्यधिक और अस्पष्ट देरी हुई है, इतना समय जिसे "उचित समय" के दायरे में नहीं माना जा सकता है।

17. इसके अलावा, प्रत्यर्थी समिति ने आखिरकार अपीलार्थी की सेवानिवृत्ति के वर्षों के बाद अपनी पहली रिपोर्ट प्रस्तुत की, हालांकि इसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करने के आधार पर उच्च न्यायालय ने खारिज कर दिया था, क्योंकि अपीलार्थी को अपने साक्ष्य प्रस्तुत करने और गवाहों से प्रतिपरीक्षा करने का अवसर नहीं दिया गया। इसके बाद, एक नई जांच की गई, और एक और रिपोर्ट फिर से प्रस्तुत की गई, हालांकि यह रिपोर्ट भी पिछली रिपोर्ट की तरह ही भ्रांति से ग्रस्त है क्योंकि यहां भी अपीलार्थी को सुने जाने का अवसर नहीं दिया गया है।

18. उच्च न्यायालय ने विवादित निर्णय में अपने निष्कर्षों में कहा कि बाद की रिपोर्ट एकपक्षीय रूप से

पारित की गई थी क्योंकि अपीलार्थी, कार्यवाही का नोटिस प्राप्त करने के बाद भी उसमें शामिल नहीं हुआ था। हालांकि अपीलार्थी का दावा है कि उसे कभी नोटिस नहीं मिला। उपलब्ध सामग्री को देखने से पता चलता है कि अपीलार्थी को जो नोटिस दिया जाना था, वह वास्तव में श्री सुदर्शन को दिया गया था, और यह डाक विभाग द्वारा स्वीकार कर लिया गया है और इसे डाक शीट में देखा जा सकता है।

19. यह तथ्य अपीलार्थी द्वारा पुनर्विलोकन कार्यवाही के दौरान सामने लाया गया, हालांकि, उच्च न्यायालय इस तरह के निष्कर्ष पर विचार करने में विफल रहा और उसमें उठाए गए आधारों पर ध्यान दिए बिना पुनर्विलोकन को खारिज कर दिया और इस प्रकार निर्णय में स्पष्ट त्रुटि हुई।

20. अपीलार्थी को सुने जाने का अवसर न देकर, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत *"ऑडी अल्टरम पार्टेम (दूसरे पक्ष को सुनें),"* के सिद्धांत का भी उल्लंघन किया गया है। अपीलार्थी को, उन कार्यवाहियों में जहां उसके एक समुदाय से संबंधित होने की वास्तविकता प्रश्न के घेरे में है, उसे सुने जाने का अधिकार होना चाहिए, और उसे गवाहों से

प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार होना चाहिए, क्योंकि कार्यवाही की प्रकृति केवल उसके रोजगार से संबंधित प्रश्न नहीं है, बल्कि कुछ ऐसा भी है जो उसके अस्तित्व के मूल, यानी, उसकी पहचान पर प्रहार करता है।

निष्कर्ष

21. इस स्तर पर हम यह स्पष्ट करना चाहेंगे कि ऐसे मामलों में जहां रोजगार फर्जी समुदाय प्रमाणपत्र पर आधारित है, यह कानून तय है कि सेवानिवृत्ति के बाद के लाभ नहीं दिए जा सकते हैं। हालांकि, वर्तमान मामले में, एक बहुत स्पष्ट अंतर है। जबकि प्रत्यर्थी (गण) ने अपीलार्थी के समुदाय प्रमाणपत्र के नकली होने का दावा किया है, ऐसा दावा सिद्ध नहीं हुआ है। भले ही अपीलार्थी के समुदाय प्रमाणपत्र को फर्जी घोषित करने वाली दो रिपोर्टें अत्यधिक और अस्पष्ट देरी के बाद प्रस्तुत की गईं, तथापि, दोनों रिपोर्टों में अपीलार्थी की भागीदारी की अनुमति नहीं दी गई है।

22. अनुसूचित जनजाति समुदायों के मामलों में एक समुदाय प्रमाणपत्र, कागज के किसी अन्य टुकड़े के विपरीत, यह एक ऐसे समुदाय से संबंधित व्यक्ति की

पहचान है जिसने वर्षों तक उत्पीड़न का सामना किया है। भारत का संविधान ऐतिहासिक अन्याय के आधार पर अनुसूचित जनजाति समुदायों के लोगों को कुछ अधिकार प्रदान करता है, और ऐसे अधिकारों को कागजों से असल जिंदगी के धरातल पर लाने लिए, ज्यादातर मामलों में समुदाय प्रमाणपत्र एक आवश्यक दस्तावेज बन जाता है। यह प्रमाणपत्र, इतिहास की स्वीकृति होने के साथ-साथ, एक दस्तावेज़ भी है जो संवैधानिक अधिकारों को वास्तविकता में बदलने वाला एक उपकरण बनकर ऐसे ऐतिहासिक अन्याय को सुधारने का प्रयास करता है। ऐसे परिदृश्य में जहां इस दस्तावेज़ के महत्व और लोगों के अधिकारों पर इसके प्रभाव को ध्यान में रखते हुए, समुदाय प्रमाणपत्र की वैधता पर सवाल उठाया जाता है, दस्तावेज़ पर सवाल उठाने वाली कार्यवाही, अत्यंत असाधारण परिस्थितियों को छोड़कर, एक पक्षीय नहीं की जा सकती है।

23. कोई भी व्यक्ति, जिसकी संपूर्ण पहचान और उसके अतीत, वर्तमान और भविष्य के अधिकारों को चुनौती दी गई है, उसे कम से कम निष्पक्ष रूप से सुनवाई

का अवसर दिया जाना चाहिए। हालांकि, मौजूदा मामले में, अपीलार्थी को इस तरह के अधिकार से वंचित कर दिया गया है, और इसलिए प्रमाणपत्र की प्रकृति को गलत साबित करने के लिए प्रत्यर्थी (गण) पर सबूत का जो भार था उसका निर्वहन नहीं किया गया है। सबूत के ऐसे भार के निर्वहन के अभाव में, इस न्यायालय को अपीलार्थी के समुदाय प्रमाणपत्र को वास्तविक मानना चाहिए।

24. उपर्युक्त चर्चाओं के आधार पर, हमारी राय है कि दोनों विवादित आदेश रद्द किए जाने चाहिए, और अपीलार्थी को उसकी 38 साल की लंबी सेवा के माध्यम से अर्जित सेवानिवृत्ति के बाद के लाभों का हकदार माना जाता है। प्रत्यर्थी-बैंक को अपीलार्थी को सेवानिवृत्ति के बाद के सभी लाभ, जो उसे नहीं दिए गए थे, वास्तविक भुगतान की तिथि से भुगतान की तिथि तक भुगतान को अनावश्यक रूप से रोकने के लिए 6% साधारण ब्याज के साथ देने का निर्देश दिया जाता है।

25. परिणामस्वरूप, अपील स्वीकार की जाती है जुर्माने के हिसाब से कोई आर्डर नहीं है।

अंकित ज्ञान

(सहायकःमहेंद्र यादव, एलसीआरए)

अपील की अनुमति दी गई।

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्मेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*

Disclaimer: *The translated judgment in vernacular language is meant for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purpose. For all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.*